ध्यान दें:

11

काव्य के प्रकार

संस्कृत साहित्य का भण्डार सागर तुल्य है। हमारे संस्कृत वाङ्मय में बहुत सी विधाओं में कवि का कर्म परिलक्षित होता हैं। परन्तु कवि की कृति कैसी है उस विषय में सम्यक् परिचय नहीं होता। कहीं केवल गद्यरूप, कहीं गद्य-पद्य रूप, अथवा कहीं केवल पद्यमय रूप दिखाई देता है। इसलिए पाठक के मन में संशय होता है। इसलिए इस पाठ में छात्रों की सुगमता के लिए काव्य भेद को सरल रीति से प्रतिपादित किया गया है। किस प्रकार का काव्य किस विधा से कहा जाता है वह यहाँ आलोचित किया गया है। काव्यों के दलभेद होते हैं। सरल उपायों से उनका पृथक्करण भी होता है। विचित्रता ही मनुष्यों का स्वभाव है, इसलिए कवियों ने अपनी प्रतिभा से अपने कर्मों में विचित्रता का प्रतिपादन किया है। उनके ही वैचित्र्यों की अलग अलग मुख्य रूप से यहाँ आलोचना की गई है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप समर्थ होंगे;

- काव्य के प्रकारों को जानने में;
- काव्य के अभिधान को जानने में;
- काव्यभेद के प्रयोजन को जानने में;
- काव्य भेद में कारण को जानने में;
- काव्यकर्तृ के विषय में जाने पाने में;
- विविध काव्यों के विषय में जान पाने में;
- दृश्यकाव्यादि के स्वरूप को जानने में;

11.1) भूमिका

साधारणत: काव्य वस्तुओं के चार आश्रयभूत पुराण, इतिहास, जनश्रुति और कविकल्पना है। जिन्हें

ध्यान दें:

निश्चय ही पौराणिक कथा का आश्रय लेकर निबद्ध किया जाए वे पौराणिक काव्य, और जिन्हें ऐतिहासिक आधार से निबद्ध किया जाए वे ऐतिहासिक और जिन्हें जन श्रुति के आधार से रचा जाए वे जन श्रुति काव्य, और जिन्हें कवि कल्पना के आधार से रचा जाए वे काल्पनिक काव्य होते हैं। हालाँकि पौराणिकादि काव्य में भी कल्पना की प्रधानता होती है फिर भी इनकी गणना कथा वस्तु मात्र आधार से है। और समालोचकों के द्वारा उनके पुन: स्वरूप से देवकाव्य-यमककाव्य-श्लेषकाव्यादि भेदों के भी बहुत से भेद किए गए है।

पौराणिक काव्यों में पाणिनी का जाम्बवतीविजय, व्याडि का बालचरित, कात्यायन का स्वर्गारोहण, पतंजलि का महानन्दमय, कालिदास का रघुवंशम् और कुमारसम्भव, कुमारदास का जानकी हरण, भारवि का किरातार्जुनीयम्, बाण का हर्षचरित, भट्टिकवि का रावणवध, माघ का शिशुपालवध, श्री हर्ष का नैषधीयचरित आदि है।

ऐतिहासिक काव्यों में वाक्पतिराज का गौडवधम् (गउडवहो), शिवस्वामी का कप्फणाभ्युदय, पद्मगुप्त का नवसहसांक चरित, बिल्हण का विक्रमांकदेवचरित, कल्हण की राजतरंगिणी, जल्हण का सोमपाल विजय, हेमचन्द्र का कुमारपालचरित, सोमेश्वर का कीर्तिकौमुदी काव्य, अरिसिंह का सुकृतकीर्तनम्, बालचन्द्र का वसन्तविलास, नयनचन्द्र का हम्मीरमहाकाव्य, चन्द्रशेखर का सुर्जनचरित, राजनाथ का अच्युतराजाभ्युदय, गंगा देवी का मधुराविजय अथवा वीरकम्परायचरित, सन्ध्याकरनन्दिन का रामपालचरित, जयानक कवि का पृथ्वीराजविजयम्, शम्भुकवि का राष्ट्रौढ़वंशमहाकाव्य, यज्ञनारायण का रघुनाथभुपविजय, परमेश्वरशिवद्विज का श्रीरामवर्ममहाराजचरित, शंकरलाल का रावजीराजकीर्तिविलास, नागराज का भारतीयदेश्ज्ञभक्तचरित, दिलीपदत्त का मथुराप्रसाद का प्रतापविजयम्, द्विजेन्द्रनाथ का स्वराजविजयम् सत्यव्रत का गोविन्दसिंह महाकाव्य इत्यादि प्रसिद्धों का उल्लेख हैं।

जनश्रुतिमूल काव्यों में प्राय: गद्य साहित्य ही दिखाई देता है। उनमें सुबन्धु का वासवदत्ता, बाण की कादम्बरी, और दण्डी का दशकुमारचरित इत्यादि प्रसिद्ध है। इस प्रकार से ही गुणाढय की बृहत्कथा, सोमेश्वर की कथासरितसागर और क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामंजरी है।

कल्पनामूल में मेघदूत-ऋतुसंहार आदि लघुकाव्य ही दिखाई देते है।

11.2) स्वरूप के अनुसार काव्य के भेद

संसार में जो काव्य प्राप्त होते है उनमें अपनी अपनी विशेषता से काव्य भेदों में अपनी अपनी कोटि में उनका अन्तर्भाव होता है। काव्य की बहुत सी विधा होती हैं। उनके भेद नीचे बताए गए हैं। काव्य की बहुत विधाएं हैं, फिर भी स्वरूप के अनुसार मूलत: काव्य के दो भेद है। और वह है श्रव्यकाव्य और दृश्यकाव्य।

11.3) श्रव्यकाव्य

जिस काव्य का रसास्वादन अन्य के द्वारा सुनकर अथवा स्वयं पढ़कर के होता है वह काव्य श्रव्यकाव्य कहलाता है। जैसे- रामायण, महाभारत इत्यादि। श्रव्यकाव्य के भी बहुत से भेद हैं। वे क्रमश: कहे गए हैं।

ध्यान दें:

11.3.1) महाकाव्य

महाकाव्य सर्गो में निबद्ध है। उसमें आठ से अधिक सर्ग अवश्य ही होने चाहिए। महाकाव्य में धीरोदात्त आदि गुणों से युक्त नायक होता है। शृंगार, वीर, शान्त, करुण रसों में एक रस मुख्य होता है तथा अन्य रस उसके अंगभूत होते हैं। काव्य का उपजीव्य ऐतिहासिक अथवा सज्जनाश्रित होता है। महाकाव्य का फल चतुर्वर्गों में से एक होता है। लज्जा युक्त विषयों का महाकाव्य में वर्णन नहीं करना चाहिए। महाकाव्य का उदाहरण है जैसे रघुवंशम, कुमारसम्भवम् इत्यादि।

11.3.2) शास्त्रकाव्य

पद प्रयोग के व्याकरण नियमों के ज्ञान के लिए अन्य शास्त्रीय ज्ञान की सुलभता के लिए जिन काव्यों को रचा गया है वे शास्त्रकाव्य कहलाते हैं। कुछ शास्त्र काव्यों को नीचे बताया गया है।

भट्टिस्वामी का भट्टिकाव्य

प्रसिद्ध शास्त्र काव्यों में भट्टिकाव्य एक है। इस काव्य के विषय में कहते है **'दीपतुल्यः प्रबन्धोऽयं शब्दलक्षणचक्षुषाम्'** इति।

यह काव्य भट्टिस्वामी द्वारा रचा गया है। उस नाम से ही इसकी प्रसिद्धि भी हुई। इस काव्य को रावणवध नाम से भी कहते हैं।

इस काव्य में बाईस सर्ग है जिनमें 1329 श्लोक विद्यमान है। इस काव्य के निर्माण का उद्देश्य मनोविनोद के साथ संस्कृत व्याकरण का ज्ञान है। यह उद्देश्य पूर्ण भी होता है।

भट्टभीम का रावणार्जुनीयम्

इस रावणार्जुनीय नामक काव्य में अष्टाध्यायी सूत्रपाठ क्रम से पदों के निदर्शन के लिए यह शास्त्रकाव्यों में से एक माना जाता है। 'सुवृत्ततिलकम्' नामक अपने ग्रन्थ में क्षेमेन्द्र के द्वारा शास्त्रकाव्य के उदाहरण के लिए भट्टिकाव्य के साथ रावणार्जुनीयम् भी निर्दिष्ट है।

क्योंकि क्षेमेन्द्र अपने ग्रन्थ में सुवृत्ततिलक में रावणार्जुनीयम् शास्त्रकाव्य को निर्दिष्ट करता है, इसलिए रावणार्जुनीयम् के प्रणेता भट्टभीम का समय ग्यारहवीं शताब्दी से पूर्व का सिद्ध होता है।

वासुदेव का वासुदेवविजयम्

केरल में जन्में वासुदेव का वासुदेविजयम् नामक काव्य अपूर्ण ही है। वासुदेव के द्वारा अपूर्ण ही निर्मित किया गया, जिसकी पूर्ति केरलवासी नारायण के द्वारा ही तीन सर्गो में धातुकाव्य निर्माण के लिए किया। यहाँ धातुओं के प्रयोग भेद को देखकर कंसवधवृत्तान्त वर्णित है। इसका समय निश्चित रूप से नहीं कह सकते।

हेमचन्द्र का कुमारपालचरितम्।

यह काव्य ऐतिहासिक काव्य के निर्देश प्रकरण में वर्णित शास्त्रकाव्य भी है, क्योंकि इसमें 20 सर्गों में संस्कृत व्याकरण नियमों को, आठ सर्गों में प्राकृत व्याकरण नियमों को किया।

ध्यान दें:

चिरंजीवभट्टाचार्य का विद्वन्मोदतरंगिणीकाव्यम्।

किसी वंगदेश में उत्पन्न उन्नीसवीं शताब्दी से पूर्व चिरंजीव भट्टाचार्य विद्वान ने इस काव्य को कथोपकथन रूप से सम्पूर्ण दर्शन मत के प्रतिपादन के लिए रचा। यह ग्रन्थ सरस पद विन्यास के लिए हृदयाकर्षक है। प्रत्यक्षमात्र प्रमाण के प्रति कवि ने यह उक्ति अत्यन्त सरलता और सरसता से कही-

''भवादृशे दूसविदेशमागते चरन्तु वैधव्यविधानमंगनाः।'' इति।

11.3.3) देवकाव्य

जैसे शास्त्र काव्यों को शास्त्रीय तत्वों के प्रख्यात विद्वानों के द्वारा रचा गया, वैसे ही प्रधानरूप से देवताओं की कीर्ति को गाने के लिए जिन काव्यों को रचा वे देव काव्य कहलाते हैं। माघ, कुमार सम्भवादि जैसे कवित्व प्रदर्शन के लिए रचे गए प्रतीत होते हैं न कि देवताओं की कीर्ति को वर्णित करने के लिए। इसलिए वे देवकाव्य नहीं है। देवकाव्यों में देवकीर्ति की प्रधानता होती है। यहाँ प्रकरण में उस प्रकार के ही कुछ काव्यों का परिचय दिया गया है।

क्रम	देवकाव्य	कर्तार:	काव्य के विषय
1	भिक्षाटनकाव्यम्	उत्प्रेक्षावल्लभगोकुलनाथ:	यहाँ शृंगारिक पद्धति के द्वारा भिक्षुरूप शिव का चित्रण किया गया है।
2	शिवलीलार्णव:	नीलकण्ठदीक्षित:	यहाँ 22 सर्गों में मदुरा स्थित सुरेन्द्रनाथ शिव की 64 प्रसिद्ध लीलाओं का वर्णन है
3	हरिचरितचिन्तामणि:	जयद्रथ:	यहाँ शिव की महिमा वर्णित है। यहाँ अनुष्टुप् छन्द है।
4	हरिविलासकाव्यम्	लोलिम्बराज:	यहाँ श्री कृष्ण की बाल लीलाओं का सरस शृंगारिक वर्णन किया गया है।
5	यादवाभ्युदयम्	वेदान्तदेशिक:	यहाँ श्री कृष्ण की जीवन कथा और महिमा को वर्णित किया गया है।

11.3.4) खण्ड काव्य

परिचय- महाकाव्य के एक देशानुसार खण्ड काव्य होता है। महाकाव्य में केवल एक का अथवा एक से अधिक नायक नायिकाओं का सम्पूर्ण जीवन ही चित्रित होता है। खण्ड काव्य में उसका एक देश ही चित्रित होता है। उससे खण्ड काव्य वस्तुत: लघु काव्य ही है। क्योंकि महा काव्य में जहाँ जीवन की समग्रता का प्रसार है वहाँ खण्डकाव्य में जीवन के एक ही पक्ष की तन्मयता होती है। उससे ही खण्डकाव्य बिना कारण और प्रकार से महाकाव्य से छोटा ही होता है। और महाकाव्य में भी जीवन के एक से अधिक पक्ष को भी प्रस्तुत कर सकते है, खण्डकाव्य में तो एक ही पक्ष उन्नत होता है। विस्तृत आकार वाले महाकाव्य से छोटे आकार वाला ही खण्ड काव्य है।

खण्डकाव्य मुख्यत: चार प्रकार का दिखाई देता है शृंगारिक, धार्मिक, नैतिक और सांग्रहिक। प्रथम

ध्यान दें:

भेद भी गीति-प्रस्तुति-स्फुट भेद से तीन प्रकार का है। द्वितीय स्तुतिकाव्य ही है। तृतीय नीतिपरक है (उसे ही उपदेश परक कहते हैं) और अन्योक्तिरूप। चतुर्थ भेद संग्रहपरक है सुभाषित संग्रह और कोश इसके भेद हैं। और कहीं सभी पक्षों का मिश्रण भी दिखाई देता है।

खण्डकाव्य की उत्पत्ति- यद्यपि लौकिक साहित्य में खण्डकाव्य का उद्घाटन कालिदास ने ही किया फिर भी यह उससे प्राचीनतम सिद्ध होता है। ऋग्वेदादि में भी खण्डकाव्य का स्वरूप उपलब्ध होता है। कमनीय अर्थ का द्योतक वाक्य ही काव्य होता है। वाक्यौघः अर्थात् वाक्यराशि काव्य होती है, एक वाक्य भी काव्य होता है यदि वह कमनीय अर्थ का प्रकाशन करता है। ऋग्वेदादि में इस प्रकार के वचनों का निश्चय ही काव्यत्व है। जैसे उषस् सूक्त, विपाशाशुतुद्री सूक्त, सुदासविजय सूक्त और भूमि सूक्त इत्यादि सूक्त है।

हंसराज आदि समालोचक खण्डकाव्य को पांच प्रकार का मानते है सूक्तमय, भक्तिरसमय, ऐतिहासिक, रूपकान्तर्गत और संकीर्ण। उनमें से वेदों में केवल सूक्तमय उपलब्ध है जैसे- उषस् सूक्त, भक्तिरसमय जैसे उपनिषदों में और बौद्धग्रन्थों में, जैसे ऐतिहासिक रामायण में महाभारत में प्रस्तुत प्रकृत प्रकृतिवर्णन, रूपकान्तर्गत जैसे रूपकान्त रूप से स्थापित पद्य और संकीर्ण शृंगार प्रधान मेघदूतादि है।

11.3.5) यमक काव्य

जैसे शास्त्रकाव्य और देवकाव्य अलग वर्गभेद में स्थापित है वैसे ही यमक काव्य और श्लेषकाव्य भी अलग वर्ग योग्य है। पहले यमक काव्य को फिर श्लेष काव्य को देखते हैं।

यमक बहुत विधाओं रीति ग्रन्थों में दिखाई देता है। दण्डी ने अपने काव्यादर्श में यमक का विस्तार से वर्णन किया है। दण्डी का द्विसन्धान नामक कोई काव्य भी उसी प्रकार का स्मरण है।

घटखर्पर का यमक काव्य

घटखर्पर का वास्तविक नाम स्मरण नहीं, उन्होंने केवल

आलम्ब्य चाम्बुतृषितः करकोशपेयं भावानुरक्तवनितासुरतैः शपेयम्।

जीयेय येन कविना यमकेन तेन तस्मै वहेयमुदकं घटखर्परेण।।

ऐसी प्रतिज्ञा की, तब से उनकी घटखर्पर संज्ञा ही हो गई।

यह यमक काव्य केवल 22 श्लोंको में पूर्ण है। इसको कालिदास प्रणीत जो मानते हैं वे भ्रमित हैं। इस ग्रन्थ की आठ टीकाएँ उपलब्ध है। इसके रचनाकाल का निर्धारण नहीं कर सकते।

नीतिवर्मन का कीचकवधकाव्यम्

इसके रचयिता पूर्व भारत वासी कोई कवि प्रतीत होते हैं। यहाँ पांच सर्ग, और 177 श्लोक हैं। पहले चार सर्गों में यमक का चमत्कार हृदयग्राही है।

वासुदेव का नलोदयकाव्यम्

केरल देशवासी वासुदेव के द्वारा रचित नलोदय काव्य यमक काव्यों में प्रसिद्ध है। यहाँ चार सर्गों में 217 श्लोक निबद्ध है। कवि ने यमकमय युधिष्ठिरविजयोदय नामक काव्य भी रचा। यह वासुदेव

ध्यान दें:

कुलशेखरवर्मा के समकालीन दशम् शताब्दी में उत्पन्न हुए । नलोदयकाव्य का यमक अत्यन्त रमणीय है। एक उदाहरण देखें-

'योजनि ना गोपीतश्चचार यो वल्लवांगनागोपीतः।
भूर्येना गोपीतः कंसारेर्द्वेषमेव योनागोपीतः॥''

11.3.5) श्लेष काव्य

सन्ध्याकरनन्दिनो 'रामचरितम्'

यह सन्ध्याकरनन्दी वंग देश में पुण्ड्रवर्धन में पिनाकिनन्दिन के पुत्र और प्रजापतिनन्दिन के पौत्र है। इसकी पूर्ति कवियों के द्वारा ग्यारहवीं शताब्दी के अन्त में उत्पन्न राजा मदनपाल के समय में इसका समय निश्चित किया। यहाँ काव्य में पालवंश में उत्पन्न रामपाल का और भगवान राम का वर्णन श्लेष भाषा में किया है। वंगदेश के मध्ययुगीन इतिहास को जानने के लिए काव्य उत्तम साधन है।

धनंजय का **'राघवपाण्डवीयम्'**

इस कवि का समय 1123-1140 शताब्दी मानते हैं। यहाँ 18 सर्गों में रामायण महाभारत की कथा अत्यन्त चतुरता से निबद्ध की गई है।

इस प्रकार के अन्य काव्य है-

ग्रन्थ	कर्ता	समय
राघवपाण्डवीयम्	कविराजमाधवभट्टः	बारहवीं शताब्दी उत्तर भाग
राघवनैषधीयम्	हरदत्तसुरिः	अट्ठारहवीं शताब्दी
पार्वतीरुक्मिणीयम्	विद्यामाधवः	बारहवीं शताब्दी का मध्य भाग
यादवराघवीयम्	वेंकटाध्वरी	सत्रहवीं शताब्दी
राघवपाण्डवयादवीयम्	चिदम्बरकविः	1586-1714 ई.
रामकृष्णविलोमकाव्यम्	दैवज्ञसूर्यः	16वीं शताब्दी पूर्वार्ध

पाठगत प्रश्न-1

1. ऐतिहासिक काव्यों का उदाहरण क्या है?
2. पाणिनी का जाम्बवती विजय किस प्रकार का काव्य है?
3. महाकाव्य में कितने सर्ग अवश्य ही होने चाहिए?
4. भट्टिकाव्य किस प्रकार का काव्य है?
5. रावणार्जुनीयं किसके द्वारा रचा गया?
6. यमक काव्य का एक उदाहरण दीजिए?

ध्यान दें:

7. सन्ध्याकरनन्दि का रामचरित किस प्रकार का काव्य है?

8. यादवराघवीय काव्य का रचनाकाल क्या है?

11.4) दृश्यकाव्य

जिस काव्य का रसास्वादन काव्य के अभिनय दर्शन से और अभिनेता के वार्तालाप के श्रवण से होता है वह काव्य दृश्यकाव्य कहलाता है। जैसे अभिज्ञानशाकुन्तलम्। दृश्य काव्य के दो भेद हैं। रूपक और उपरूपक।

11.4.1) रूपक

कवि अपनी प्रतिभा के द्वारा काव्य के अभिनय के लिए जब कल्पना करते हैं तब वह काव्य रूपक कहलाता है। रूपक के दस प्रकार हैं। वे क्रमशः नीचे बताए जाएंगे। संस्कृत साहित्य जगत में अन्य साहित्य के समान ही रूपक साहित्य भी सुसमृद्ध है। उसकी अपनी एक विशेष परम्परा है। लोकप्रियता की दृष्टि से काव्य में रूपक साहित्य का प्रथम स्थान है। उसके केवल तीन ही अंग नाट्य, नृत्य, नृत्त वैदिक युग से पहले भी अस्तित्व में थे ऐसा वेद साहित्य से सिद्ध ही होता है। ऋग्वेद में उषा नर्तकी के रूप में चित्रित है। जैसे-

''अधि पेशांसि वपते नृतूरिवापोर्णते वक्ष उस्रेव वर्जहम्।
ज्योतिर्विश्वस्मै भुवनाय कृण्वती गावो न व्रजं व्युषा आवर्तमः॥'' (ऋ.1।92।4)

इस प्रकार वहाँ नाट्य तत्वों में मुख्यतम कथोपकथन भी दिखाई देता है जैसे पुरुरवाउर्वशी संवाद सूक्त में, यमयमी सूक्त में और इन्द्रेन्द्राणीदृषाकपिसंवाद में। कात्यायन श्रौतसूत्र में सोमपान अवसर पर अभिनय का प्रसंग भी आता है। जैसे- 'अपोर्णुते दीक्षितः शिरः' (ऋ 7.8.25) इति। यजुर्वेद में केवल नृत्त गीत के लिए एवं सूतशैलूषादि का उल्लेख दिखाई देता है। जैसे-

'नृत्ताय सूतं गीताय शैलूषं (30।6)।

शब्दायाडम्बराघातं महसे वीणावादं (30।19)।

नमयि पुंश्वलूं हसाय कारिं (30।20)।

इस प्रकार ही वैदिककाल में बोया नाट्यबीज रामायणकाल में सम्यक् रूप् से फैला दिखाई देता है। तब नाट्य नृत्त और गान जीवन के अनिवार्य अंग के रूप में ग्रहण किए दिखाई देते है वैसे ही अभिनय भी। वहाँ नट नर्तक आदि संघ का भी उल्लेख दिखाई देता है। जैसे-

'नटनर्तकसंघानां गायकानां च गायताम्।
यतः कर्णसुखा वाचः शुश्राव जनता ततः॥''

महाभारत और रामायण में कौबेरः और रंभाभिसार दो नाटक का नामोल्लेख दिखाई देता है। हरिवंश में वसुदेव यज्ञ के प्रसंग में भद्राख्य नट का नाट्य प्रदर्शन स्मरण है।

विनयपिटक में रंगशाला का उल्लेख चुल्लवग्गकथा प्रसंग में दिखाई देता है। पतंजलि महाभाष्य में भी कंसवध, बालिवध दो नाटक स्मरण है। शुंग काल से तो नाट्य युग ही प्रवृत्त होता दिखाई देता

ध्यान दें:

है। संस्कृत नाटक साहित्य की उत्पत्ति को लेकर पण्डितों में विविध मत है। उनके अनुसार अनुकरण की प्रवृत्ति ही नाटक का मूलाधार है। अनुकरण की प्रवृत्ति तो मनुष्य की सभी प्रवृत्तियों में मूर्धन्य है। विशेषत: बालकों में यह प्रवृत्ति प्रौढ़ की अपेक्षा विशिष्ट है। यह प्रवृत्ति ही क्रमश: अभिनय के बाद और नाट्य की उत्पत्ति में होती है। प्रथम तो यह प्रवृत्ति वीर पूजा में मूर्त रूप से दिखाई देती है। स्वर्ग गए वीर पुरुषों की स्मृति में उनके प्रति सम्मान प्रदर्शन के लिए समय-समय पर सामूहिक महोत्सव का आयोजन होता है। वे केवल समाज शब्द से व्यपदिष्ट है। उस प्रकार से ही समाज में श्रद्धेय वीरचरित का कुशल अभिनय के द्वारा अनुकरण करते हैं। रामलीला और कृष्णलीला इसका एक उदाहरण है। वहाँ प्रकृतिक परिवर्तनों को मूर्त से उपस्थापन की प्रवृत्ति भी नाट्य की उत्पत्ति में सहायक थी। पुत्तलिकानृत्य का भी यहाँ बड़ा योगदान था। इन्द्रध्वज आदि महोत्सव भी नाट्य की उत्पत्ति में सहकारी होते हैं। वस्तुत: नाट्य की उत्पत्ति मनुष्य की स्वाभाविक अनुकरण की प्रवृत्ति से होती है। आचार्य भरत तो नाट्य की उत्पत्ति अन्य कारण से निर्देशित करते हैं। उनके अनुसार वेवस्त मन्वन्तर में त्रेतायुग के प्रथम लोक में सुखदुख से अभिभूत ग्राम्यधर्म में प्रवृत्त उसके शिक्षण के लिए सभी वर्णों के लिए वेद रचना हेतु इन्द्रादि पितामह से प्रार्थना की ऋग्वेद् से पाठ्य को, साम से गीत को, यजुर्वेद से अभिनय को, अथर्व से रस को लेकर वेद उपवेद से सम्बद्ध नाट्यवेद को रचा। और फिर भरतमुनि ने उसके प्रयोग के लिए ब्रह्मा को कहा। इन्द्रध्वज महोत्सव के अवसर पर प्रारम्भ में नान्दी का प्रथम प्रयोग किया। परमेश्वर प्रणीत अमृतमन्थन नामक समवकार का सर्वप्रथम अभिनय किया। और फिर ब्रह्म ने द्वितीय त्रिपुरदाह नामक डिम रचा। यद्यपि भरत के मत में वास्तविकता की अपेक्षा पौराणिकत्व ही अधिक आनन्दित करता है फिर भी इससे यह तो सिद्ध होता है कि इन्द्रध्वजोत्सव नाटक का प्रथम प्रेरक है। नाट्योत्पत्ति के विषय में रिजवे महोदय का वीर पूजा, कीथ के प्राकृतिक परिवर्तन मत की अपेक्षा पिशेल का पुत्तिलकानृत्य मत की अपेक्षा कोन महोदय के छाया नाटक की अपेक्षा भी प्रशस्य है क्योंकि वह मत ही वस्तुत: नाट्याचार्य भरत के मत के साथ कहता है। अमृतमन्थन और त्रिपुरदाह वीरपूजा परम्परा के ही ग्रन्थ विशेष है।

नाटयस्य प्रयोजनं हि लोकरंजनपूर्वकं धर्मार्थकामशिक्षणम्। उक्तमेव-

'त्रिवर्गसाधनं नाटयम्।' लोक मनोरंजन ही नाट्य का मूलभूत उद्देश्य है। जैसा धनंजय कहते हैं- **'आनन्दनि: स्यन्दिषु रूपकेषु व्युत्पत्तिमात्रं फलमल्पबुद्धि:'** इति। दु:ख में, श्रम में, शोक में और तपस्वी के लिए समयानुसार यह नाट्य विश्रामजन्य होगा। नाट्य सभी का विनोदजन्य करने वाला है। जैसा कहा है कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में-

''देवानामिदमामनन्ति मुनय: शान्तं क्रतुं चाक्षुष।
रुद्रेणेदमुमाकरव्यतिकरे स्वांगे विभक्तं द्विधा।
त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरितं नानारसं दृश्यते
नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाऽप्येकं समाराधनम्॥'' इति (1।4)

अवस्था का अनुकरण नाट्य है और वह रस का आश्रय है। भावाश्रित नृत्य और तालालयाश्रित नृत्त है। वस्तु, नेता, रस भेद से नाट्य दस प्रकार का है। नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अंक, वीथी, प्रहसन। कथा वस्तु दो प्रकार की है आधिकारिक और प्रासंगिक। और वह पुन: प्रसिद्ध और कल्पित के भेद से पुन: दो प्रकार की है। नेता चार प्रकार का है धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित, धीरप्रशान्त। रस आठ है- शृंगार, वीर, करुण, अद्भुत, हास्य, भयानक, वीभत्स, रौद्र। कुछ नाट्य में शान्त रस की भी पुष्टि करते हैं। रामचन्द्र के मत में उसकी भी पुष्टि अभिनय से सम्भव है।